श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 4

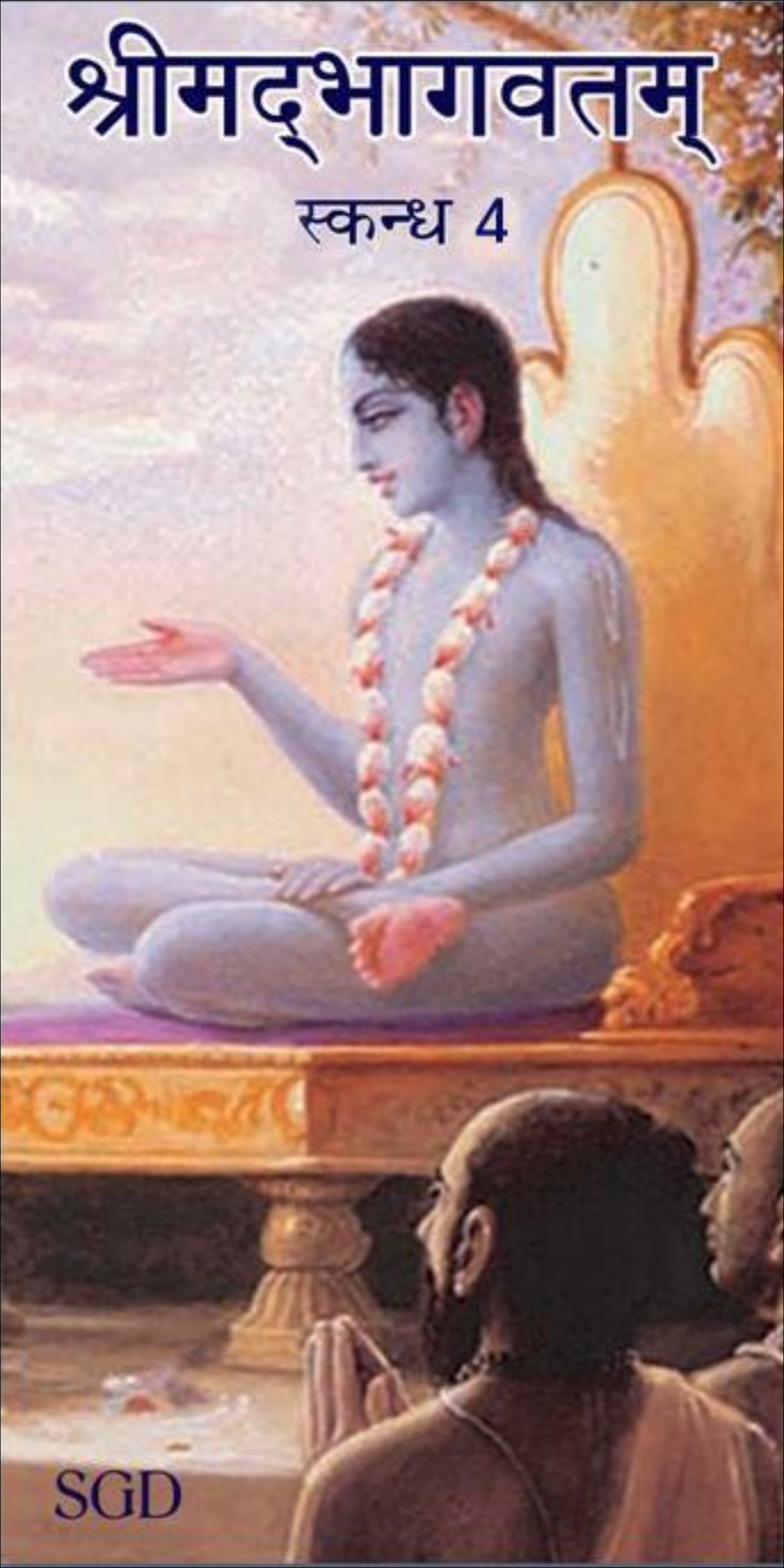

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 8

ध्रुव महाराज का गृहत्याग और वनगमन

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: मैत्रेय ऋषि ने कहा : सनकादि चारों कुमार और नारद, ऋभु, हंस, अरुणि तथा यति—ब्रह्मा के ये सारे पुत्र घर पर न रहकर (गृहस्थ नहीं बने) नैष्ठिक ब्रह्मचारी हुए।

श्लोक 2: ब्रह्मा का अन्य पुत्र अधर्म था जिसकी पत्नी का नाम मृषा था। उनके संयोग से दो असुर हुए जिनके नाम दम्भ अर्थात धोखेबाज

तथा माया अर्थात ठगिनी थे। इन दोनों को निर्ऋति नामक असुर ले गया, क्योंकि उसके कोई सन्तान न थी।

श्लोक 3: मैत्रेय ने विदुर से कहा : हे महापुरुष, दम्भ तथा माया से लोभ और निकृति (चालाकी) उत्पन्न हुए। उनके संयोग से क्रोध और हिंसा और फिर इनकी युति से कलि तथा उसकी बहिन दुरुक्ति उत्पन्न हुए।

श्लोक 4: हे श्रेष्ठ पुरुषों में महान्, कलि तथा दुरुक्ति से मृत्यु तथा भीति नामक सन्तानें उत्पन्न हुईं। फिर

इनके संयोग से यातना और निरय (नरक) उत्पन्न हुए।

श्लोक 5: हे विदुर, मैंने संक्षेप में प्रलय के कारणों का वर्णन किया। जो इस वर्णन को तीन बार सुनता है उसे पुण्य लाभ होता है और उसके आत्मा का पापमय कल्मष धुल जाता है।

श्लोक 6: मैत्रेय ने आगे कहा : हे कुरुश्रेष्ठ, अब मैं आपके समक्ष स्वायंभुव मनु के वंशजों का वर्णन करता हूँ जो भगवान् के अंशांश के रूप में उत्पन्न हुए थे।

श्लोक 7: स्वायंभुव मनु को अपनी पत्नी शतरूपा से दो पुत्र हुए जिनके नाम थे—उत्तानपाद तथा प्रियव्रत। चूँकि ये दोनों श्रीभगवान् वासुदेव के अंश के वंशज थे, अत: वे ब्रह्माण्ड का शासन करने और प्रजा का भलीभाँति पालन करने में सक्षम थे।

श्लोक 8: उत्तानपाद के दो रानियाँ थीं—सुनीति तथा सुरुचि। इनमें से सुरुचि राजा को अत्यन्त प्रिय थी। सुनीति, जिसका पुत्र ध्रुव था, राजा को इतनी प्रिय न थी।

श्लोक 9: एक बार राजा उत्तानपाद सुरुचि के पुत्र उत्तम को अपनी गोद में लेकर सहला रहे थे। ध्रुव महाराज भी राजा की गोद में चढऩे का प्रयास कर रहे थे, किन्तु राजा ने उन्हें अधिक दुलार नहीं दिया।

श्लोक 10: जब बालक ध्रुव महाराज अपने पिता की गोद में जाने का प्रयत्न कर रहे थे तो उसकी विमाता सुरुचि को उस बालक से अत्यन्त ईर्ष्या हुई और वह अत्यन्त

दम्भ के साथ इस प्रकार बोलने लगी जिससे कि राजा सुन सके।

श्लोक 11: सुरुचि ने ध्रुव महाराज से कहा : हे बालक, तुम राजा की गोद या सिंहासन पर बैठने के योग्य नहीं हो। निस्सन्देह, तुम भी राजा के पुत्र हो, किन्तु तुम मेरी कोख से उत्पन्न नहीं हो, अत: तुम अपने पिता की गोद में बैठने के योग्य नहीं हो।

श्लोक 12: मेरे बालक, तुम्हें पता नहीं कि तुम मेरी कोख से नहीं, वरन् दूसरी स्त्री से उत्पन्न हुए हो।

अत: तुम्हें ज्ञात होना चाहिए कि तुम्हारा प्रयास व्यर्थ है। तुम ऐसी इच्छा की पूर्ति चाह रहे हो जिसका पूरा होना असम्भव है।

श्लोक 13: यदि तुम राजसिंहासन पर बैठना चाहते हो तो तुम्हें कठिन तपस्या करनी होगी। सर्वप्रथम तुम्हें भगवान् नारायण को प्रसन्न करना होगा और वे तुम्हारी पूजा से प्रसन्न हो लें तो तुम्हें अगला जन्म मेरे गर्भ से लेना होगा।

श्लोक 14: मैत्रेय मुनि ने आगे कहा : हे विदुर, जिस प्रकार से लाठी

से मारा गया सर्प फुफकारता है, उसी प्रकार ध्रुव महाराज अपनी विमाता के कटु वचनों से आहत होकर क्रोध से तेजी से साँस लेने लगे। जब उन्होंने देखा कि पिता मौन हैं और उन्होंने प्रतिवाद नहीं किया, तो उन्होंने तुरन्त उस स्थान को छोड़ दिया और अपनी माता के पास गये।

श्लोक 15: जब ध्रुव महाराज अपनी माता के पास आये तो उनके होंठ क्रोध से काँप रहे थे और वे सिसक-सिसक कर जोर से रो रहे थे। रानी सुनीति ने अपने लाड़ले को

तुरन्त गोद में उठा लिया और अन्त:पुर के वासियों ने सुरुचि के जो कटु वचन सुने थे उन सबको विस्तार से कह सुनाया। इस तरह सुनीति अत्यधिक दुखी हुई।

श्लोक 16: यह घटना सुनीति के लिए असह्य थी। वह मानो दावाग्नि में जल रही थी और शोक के कारण वह जली हुई पत्ती (बेलि) के समान हो गई और पश्चात्ताप करने लगी। अपनी सौत के शब्द स्मरण होने से उसका कमल जैसा सुन्दर मुख आँसुओं से भर गया और वह इस प्रकार बोली।

श्लोक 17: वह तेजी से साँस भी ले रही थी और वह इस दुखद स्थिति का कोई इलाज ठीक नहीं ढूँढ पा रही थी। अत: उसने अपने पुत्र से कहा : हे पुत्र, तुम अन्यों के अमंगल की कामना मत करो। जो भी दूसरों को कष्ट पहुँचाता है, वह स्वयं दुख भोगता है।

श्लोक 18: सुनीति ने कहा : प्रिय पुत्र, सुरुचि ने जो कुछ भी कहा है, वह ठीक है, क्योंकि तुम्हारे पिता मुझको अपनी पत्नी तो क्या अपनी दासी तक नहीं समझते, उन्हें मुझको स्वीकार करने में लज्जा आती है।

अत: यह सत्य है कि तुमने एक अभागी स्त्री की कोख से जन्म लिया है और तुम उसके स्तनों का दूध पीकर बड़े हुए हो।

श्लोक 19: प्रिय पुत्र, तुम्हारी विमाता सुरुचि ने जो कुछ कहा है, यद्यपि वह सुनने में कटु है, किन्तु है सत्य। अत: यदि तुम उसी सिंहासन पर बैठना चाहते हो जिसमें तुम्हारा सौतेला भाई उत्तम बैठेगा तो तुम अपना ईर्ष्याभाव त्याग कर तुरन्त अपनी विमाता के आदेशों का पालन करो। तुम्हें बिना किसी विलम्ब के

पुरुषोत्तम भगवान् के चरण-कमलों की पूजा में लग जाना चाहिए।

श्लोक 20: सुनीति ने कहा : भगवान् इतने महान् हैं कि तुम्हारे परदादा ब्रह्मा ने मात्र उनके चरणकमलों की पूजा द्वारा इस ब्रह्माण्ड की सृष्टि करने की योग्यता अर्जित की। यद्यपि वे अजन्मा हैं और सब जीवात्माओं में प्रधान हैं, किन्तु वे इस उच्च पद पर भगवान् की ही कृपा से आसीन हैं, जिनकी आराधना बड़े-बड़े योगी तक अपने मन तथा प्राण-वायु को रोक कर करते हैं।

श्लोक 21: सुनीति ने अपने पुत्र को बताया : तुम्हारे बाबा स्वायंभुव मनु ने दान-दक्षिणा के साथ बड़े बड़े यज्ञ सम्पन्न किये और एकनिष्ठ श्रद्धा तथा भक्ति से उन्होंने पूजा द्वारा भगवान् को प्रसन्न किया। इस प्रकार उन्होंने भौतिक सुख तथा बाद में मुक्ति प्राप्त करने में महान् सफलता पाई जिसे देवताओं को पूजकर प्राप्त कर पाना असंभव है।

श्लोक 22: मेरे पुत्र, तुम्हें भी भगवान् की शरण ग्रहण करनी चाहिए, क्योंकि वे अपने भक्तों पर अत्यन्त

दयालु हैं। जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति चाहने वाले व्यक्ति सदैव भक्ति सहित भगवान् के चरणकमलों की शरण में जाते हैं। अपना निर्दिष्ट कार्य करके पवित्र होकर तुम अपने हृदय में भगवान् को स्थिर करो और एक पल भी विचलित हुए बिना उनकी सेवा में तन्मय रहो।

श्लोक 23: हे प्रिय ध्रुव, कमल के दलों जैसे नेत्रों वाले भगवान् के अतिरिक्त मुझे कोई ऐसा नहीं दिखता जो तुम्हारे दुखों को कम कर सके। ब्रह्मा जैसे अनेक देवता लक्ष्मी देवी

को प्रसन्न करने के लिए लालायित रहते हैं, किन्तु लक्ष्मी जी स्वयं अपने हाथ में कमल पुष्प लेकर परमेश्वर की सेवा करने के लिए सदैव तत्पर रहती हैं।

श्लोक 24: मैत्रेय मुनि ने आगे कहा : ध्रुव महाराज की माता सुनीति का उपदेश वस्तुत: उनके मनोवांछित लक्ष्य को पूरा करने के निमित्त था, अत: बुद्धि तथा दृढ़ संकल्प द्वारा चित्त का समाधान करके उन्होंने अपने पिता का घर त्याग दिया।

श्लोक 25: नारद मुनि ने यह समाचार सुना और ध्रुव महाराज के समस्त कार्यकलापों को जानकर वे चकित रह गये। वे ध्रुव के पास आये और उनके सिर को अपने पुण्यवर्धक हाथ से स्पर्श करते हुए इस प्रकार बोले।

श्लोक 26: अहो! शक्तिशाली क्षत्रिय कितने तेजमय होते हैं! वे थोड़ा भी मान-भंग सहन नहीं कर सकते। जरा सोचो तो, यह नन्हा सा बालक है, तो भी उसकी सौतेली माता के कटु वचन उसके लिए असह्य हो गये।

श्लोक 27: महर्षि नारद ने ध्रुव से कहा : हे बालक, अभी तो तुम नन्हें बालक हो, जिसकी आसक्ति खेल इत्यादि में रहती है। तो फिर तुम अपने सम्मान के विपरीत अपमानजनक शब्दों से इतने प्रभावित क्यों हो?

श्लोक 28: हे ध्रुव, यदि तुम समझते हो कि तुम्हारे आत्मसम्मान को ठेस पहुँची है, तो भी तुम्हें असंतुष्ट होने का कोई कारण नहीं है। इस प्रकार का असन्तोष माया का ही अन्य लक्षण है; प्रत्येक जीवात्मा

अपने पूर्व कर्मों के अनुसार नियंत्रित होता है, अत: सुख तथा दुख भोगने के लिए नाना प्रकार के जीवन होते हैं।

श्लोक 29: भगवान् की गति बड़ी विचित्र है। बुद्धिमान मनुष्य को चाहिए कि वह इस गति को स्वीकार करे और अनुकूल या प्रतिकूल जो कुछ भी भगवान् की इच्छा से सम्मुख आए, उससे संतुष्ट रहे।

श्लोक 30: अब तुमने अपनी माता के उपदेश से भगवान् की कृपा प्राप्त करने के लिए ध्यान की योग-विधि पालन करने का निश्चय किया है,

किन्तु मेरे विचार से ऐसी तपस्या सामान्य व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं है। भगवान् को प्रसन्न कर पाना अत्यन्त कठिन है।

श्लोक 31: नारद मुनि ने आगे बताया : अनेकानेक जन्मों तक इस विधि का पालन करते हुए तथा भौतिक कल्मष से विरक्त रह कर, अपने को निरन्तर समाधि में रखकर और विविध प्रकार की तपस्याएँ करके अनेक योगी ईश्वर-साक्षात्कार के मार्ग का पार नहीं पा सके।

श्लोक 32: इसलिए हे बालक, तुम्हें इसके लिए प्रयत्न नहीं करना चाहिए, इसमें सफलता नहीं मिलने वाली। अच्छा हो कि तुम घर वापस चले जाओ। जब तुम बड़े हो जाओगे तो ईश्वर की कृपा से तुम्हें इन योग-कर्मों के लिए अवसर मिलेगा। उस समय तुम यह कार्य पूरा करना।

श्लोक 33: मनुष्य को चाहिए कि जीवन की किसी भी अवस्था में, चाहे सुख हो या दुख, जो दैवी इच्छा (भाग्य) द्वारा प्रदत्त है, सन्तुष्ट रहे। जो मनुष्य इस प्रकार टिका रहता है, वह

अज्ञान के अंधकार को बहुत सरलता से पार कर लेता है।

श्लोक 34: प्रत्येक मनुष्य को इस प्रकार व्यवहार करना चाहिए : यदि वह अपने से अधिक योग्य व्यक्ति से मिले, तो उसे अत्यधिक हर्षित होना चाहिए, यदि अपने से कम योग्य व्यक्ति से मिले तो उसके प्रति सदय होना चाहिए और यदि अपने समान योग्यता वालों से मिले तो उससे मित्रता करनी चाहिए। इस प्रकार मनुष्य को इस भौतिक संसार के

त्रिविध ताप कभी भी प्रभावित नहीं कर पाते।

श्लोक 35: ध्रुव महाराज ने कहा : हे नारद जी, आपने मन की शान्ति प्राप्त करने के लिए कृपापूर्वक जो भी कहा है, वह ऐसे पुरुष के लिए निश्चय ही अत्यन्त शिक्षाप्रद है, जिसका हृदय सुख तथा दुख की भौतिक परिस्थितियों से चलायमान है। लेकिन जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मैं तो अविद्या से प्रच्छन्न हूँ और इस प्रकार का दर्शन मेरे हृदय को स्पर्श नहीं कर पाता।

श्लोक 36: हे भगवन्, मैं आपके उपदेशों को न मानने की धृष्टता कर रहा हूँ। किन्तु यह मेरा दोष नहीं है। यह तो क्षत्रिय कुल में जन्म लेने के कारण है। मेरी विमाता सुरुचि ने मेरे हृदय को अपने कटु वचनों से क्षत-विक्षत कर दिया है। अत: आपकी यह महत्त्वपूर्ण शिक्षा मेरे हृदय में टिक नहीं पा रही।

श्लोक 37: हे विद्वान् ब्राह्मण, मैं ऐसा पद ग्रहण करना चाहता हूँ जिसे अभी तक तीनों लोकों में किसी ने भी, यहाँ तक कि मेरे पिता तथा पितामहों

ने भी, ग्रहण न किया हो। यदि आप अनुगृहीत कर सकें तो कृपा करके मुझे ऐसे सत्य मार्ग की सलाह दें, जिसे अपना करके मैं अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकूँ।

श्लोक 38: हे भगवन्, आप ब्रह्मा के सुयोग्य पुत्र हैं और आप अपनी वीणा बजाते हुए समस्त विश्व के कल्याण हेतु विचरण करते रहते हैं। आप सूर्य के समान हैं, जो समस्त जीवों के लाभ के लिए ब्रह्माण्ड-भर में चक्कर काटता रहता है।

श्लोक 39: मैत्रेय मुनि ने आगे कहा : ध्रुव महाराज के शब्दों को सुनकर महापुरुष नारद मुनि उन पर अत्यधिक दयालु हो गये और अपनी अहैतुकी कृपा दिखाने के उद्देश्य से उन्होंने निम्नलिखित विशिष्ट उपदेश दिया।

श्लोक 40: नारद मुनि ने ध्रुव महाराज से कहा : तुम्हारी माता सुनीति ने भगवान् की भक्ति के पथ का अनुसरण करने के लिए जो उपदेश दिया है, वह तुम्हारे लिए सर्वथा अनुकूल है। अत: तुम्हें भगवान्

की भक्ति में पूर्ण रूप से निमग्न हो जाना चाहिए।

श्लोक 41: जो व्यक्ति धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष—इन चार पुरुषार्थों की कामना करता है उसे चाहिए कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की भक्ति में अपने आपको लगाए, क्योंकि उनके चरणकमलों की पूजा से इन सबकी पूर्ति होती है।

श्लोक 42: हे बालक, तुम्हारा कल्याण हो। तुम यमुना के तट पर जाओ, जहाँ पर मधुवन नामक विख्यात जंगल है और वहीं पर पवित्र

होओ। वहाँ जाने से ही मनुष्य वृन्दावनवासी भगवान् के निकट पहुँचता है।

श्लोक 43: नारद मुनि ने उपदेश दिया : हे बालक, यमुना नदी अथवा कालिन्दी के जल में तुम नित्य तीन बार स्नान करना, क्योंकि यह जल शुभ, पवित्र एवं स्वच्छ है। स्नान के पश्चात् अष्टांगयोग के आवश्यक अनुष्ठान करना और तब शान्त मुद्रा में अपने आसन पर बैठ जाना।

श्लोक 44: आसन ग्रहण करने के पश्चात् तुम तीन प्रकार के प्राणायाम

करना और इस प्रकार धीरे-धीरे प्राणवायु, मन तथा इन्द्रियों को वश में करना। अपने को समस्त भौतिक कल्मष से मुक्त करके तुम अत्यन्त धैर्यपूर्वक भगवान् का ध्यान प्रारम्भ करना।

श्लोक 45: [यहाँ पर भगवान् के रूप का वर्णन हुआ है।] भगवान् का मुख सदैव अत्यन्त सुन्दर और प्रसन्न मुद्रा में रहता है। देखने वाले भक्तों को वे कभी अप्रसन्न नहीं दिखते और वे सदैव उन्हें वरदान देने के लिए उद्यत रहते हैं। उनके नेत्र,

सुसज्जित भौंहें, उन्नत नासिका तथा चौड़ा मस्तक—ये सभी अत्यन्त सुन्दर हैं। वे समस्त देवताओं से अधिक सुन्दर हैं।

श्लोक 46: नारद मुनि ने आगे कहा : भगवान् का रूप सदैव युवावस्था में रहता है। उनके शरीर का अंग-प्रत्यंग सुगठित एवं दोषरहित है। उनके नेत्र तथा होंठ उदीयमान सूर्य की भाँति गुलाबी से हैं। वे शरणागतों को सदैव शरण देने वाले हैं और जिसे उनके दर्शन का अवसर मिलता है, वह सभी प्रकार से संतुष्ट हो जाता है।

दया के सिन्धु होने के कारण भगवान् शरणागतों के स्वामी होने के योग्य हैं।

श्लोक 47: भगवान् को श्रीवत्स चिह्न अथवा ऐश्वर्य की देवी का आसन धारण किये हुए बताया गया है। उनके शरीर का रंग गहरा नीला (श्याम) है। भगवान् पुरुष हैं, वे फूलों की माला पहनते हैं और वे चतुर्भुज रूप में (नीचेवाले बाएँ हाथ से आरम्भ करते हुए) शंख, चक्र, गदा तथा कमल पुष्प धारण किये हुए नित्य प्रकट होते हैं।

श्लोक 48: पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् वासुदेव का सारा शरीर

आभूषित है। वे बहुमूल्य मणिमय मुकुट, हार तथा बाजूबन्द धारण किये हुए हैं। उनकी गर्दन कौस्तुभ मणि से अलंकृत है और वे पीत रेशमी वस्त्र धारण किये हैं।

श्लोक 49: भगवान् का कटि-प्रदेश सोने की छोटी-छोटी घंटियों से अलंकृत है और उनके चरणकमल सुनहले नूपुरों से सुशोभित हैं। उनके सभी शारीरिक अंग अत्यन्त आकर्षक एवं नेत्रों को भाने वाले हैं। वे सदैव शान्त तथा मौन रहते हैं और नेत्रों तथा मन को अत्यधिक मोहनेवाले हैं।

श्लोक 50: वास्तविक योगी भगवान् के उस दिव्यरूप का ध्यान करते हैं जिसमें वे उनके हृदयरूपी कमल-पुंज में खड़े रहते हैं और उनके चरण-कमलों के मणितुल्य नाखून चमकते रहते हैं।

श्लोक 51: भगवान् सदैव मुस्कराते रहते हैं और भक्त को चाहिए कि वह सदा इसी रूप में उनका दर्शन करता रहे, क्योंकि वे भक्तों पर कृपा-पूर्वक दृष्टि डालते हैं। इस प्रकार से ध्यानकर्ता को चाहिए कि वह समस्त

वरों को देने वाले भगवान् की ओर निहारता रहे।

श्लोक 52: भगवान् के नित्य मंगलमय रूप में जो अपने मन को एकाग्र करते हुए इस प्रकार से ध्यान करता है, वह अतिशीघ्र ही समस्त भौतिक कल्मष से छूट जाता है और भगवान् के ध्यान की स्थिति से फिर लौटकर नीचे (मर्त्य-लोक) नहीं आता।

श्लोक 53: हे राजपुत्र, अब मैं तुम्हें वह मंत्र बताऊँगा जिसे इस ध्यान विधि के समय जपना चाहिए।

जो कोई इस मंत्र को सात रात सावधानी से जपता है, वह आकाश में उड़ने वाले सिद्ध मनुष्यों को देख सकता है।

श्लोक 54: श्रीकृष्ण की पूजा का बारह अक्षर वाला मंत्र है—ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। ईश्वर का विग्रह स्थापित करके उसके समक्ष मंत्रोच्चार करते हुए प्रामाणिक विधि-विधानों सहित मनुष्य को फूल, फल तथा अन्य खाद्य-सामग्रियाँ अर्पित करनी चाहिए। किन्तु यह सब देश, काल तथा साथ ही सुविधाओं एवं

असुविधाओं का ध्यान रखते हुए करना चाहिए।

श्लोक 55: भगवान् की पूजा शुद्ध जल, शुद्ध पुष्प-माला, फल, फूल तथा जंगल में उपलब्ध वनस्पतियों या ताजे उगे हुए दूर्वादल एकत्र करके, फूलों की कलियों, अथवा वृक्षों की छाल से, या सम्भव हो तो भगवान् को अत्यन्त प्रिय तुलसीदल अर्पित करते हुए करनी चाहिए।

श्लोक 56: यदि सम्भव हो तो मिट्टी, लुगदी, लकड़ी तथा धातु जैसे भौतिक तत्त्वों से बनी भगवान् की मूर्ति

को पूजा जा सकता है। जंगल में मिट्टी तथा जल से मूर्ति बनाई जा सकती है और उपर्युक्त नियमों के अनुसार उसकी पूजा की जा सकती है। जो भक्त अपने ऊपर पूर्ण संयम रखता है, उसे अत्यन्त नम्र तथा शान्त होना चाहिए और जंगल में जो भी फल तथा वनस्पतियाँ प्राप्त हों उन्हें ही खाकर संतुष्ट रहना चाहिए।

श्लोक 57: हे ध्रुव, प्रतिदिन तीन बार मंत्र जप करने और श्रीविग्रह की पूजा के अतिरिक्त तुम्हें भगवान् के विभिन्न अवतारों के दिव्य कार्यों के

विषय में भी ध्यान करना चाहिए, जो उनकी परम इच्छा तथा व्यक्तिगत शक्ति से प्रदर्शित होते हैं।

श्लोक 58: संस्तुत सामग्री द्वारा परमेश्वर की पूजा किस प्रकार की जाये, इसके लिए मनुष्य को चाहिए कि पूर्व-भक्तों के पद-चिह्नों का अनुसरण करे अथवा हृदय के भीतर ही मंत्रोच्चार करके भगवान् की, पूजा करे जो मंत्र से भिन्न नहीं हैं।

श्लोक 59-60: इस प्रकार जो कोई गम्भीरता तथा निष्ठा से अपने मन, वचन तथा शरीर से भगवान् की

भक्ति करता है और जो बताई गई भक्ति-विधियों के कार्यों में मग्न रहता है, उसे उसकी इच्छानुसार भगवान् वर देते हैं। यदि भक्त भौतिक संसार में धर्म, अर्थ, काम या भौतिक संसार से मोक्ष चाहता है, तो भगवान् इन फलों को प्रदान करते हैं।

श्लोक 61: यदि कोई मुक्ति के लिए अत्यन्त उत्सुक हो तो उसे दिव्य प्रेमाभक्ति की पद्धति का दृढ़ता से पालन करके चौबीसों घंटे समाधि की सर्वोच्च अवस्था में रहना चाहिए और

उसे इन्द्रियतृप्ति के समस्त कार्यों से अनिर्वायत: पृथक् रहना चाहिए।

श्लोक 62: जब राजपुत्र ध्रुव महाराज को नारद मुनि इस प्रकार उपदेश दे रहे थे तो उन्होंने अपने गुरु नारद मुनि की प्रदक्षिणा की और उन्हें सादर नमस्कार किया। तत्पश्चात् वे मधुवन के लिए चल पड़े, जहाँ श्रीकृष्ण के चरणकमल सदैव अंकित रहते हैं, अत: जो विशेष रूप से शुभ है।

श्लोक 63: जब ध्रुव भक्ति करने के लिए मधुवन में प्रविष्ट हो गए तब

महर्षि नारद ने राजा के पास जाकर यह देखना उचित समझा कि वे महल के भीतर कैसे रह रहे हैं। जब नारद मुनि वहाँ पहुँचे तो राजा ने उन्हें प्रणाम करके उनका समुचित स्वागत किया। आराम से बैठ जाने पर नारद कहने लगे।

श्लोक 64: महर्षि नारद ने पूछा : हे राजन्, तुम्हारा मुख सूख रहा दिखता है और ऐसा लगता है कि तुम दीर्घकाल से कुछ सोचते रहे हो। ऐसा क्यों है? क्या तुम्हें धर्म, अर्थ तथा

काम के मार्ग का पालन करने में कोई बाधा हुई है?

श्लोक 65: राजा ने उत्तर दिया : हे ब्राह्मणश्रेष्ठ, मैं अपनी पत्नी में अत्यधिक आसक्त हूँ और मैं इतना पतित हूँ कि मैंने अपने पाँच वर्ष के बालक के प्रति भी दया भाव के व्यवहार का त्याग कर दिया। मैने उसे महात्मा तथा महान् भक्त होते हुए भी माता सहित निर्वासित कर दिया है।

श्लोक 66: हे ब्राह्मण, मेरे पुत्र का मुख कमल के फूल के समान था। मैं उसकी दयनीय दशा के विषय में

सोच रहा हूँ। वह असुरक्षित और अत्यन्त भूखा होगा। वह जंगल में कहीं लेटा होगा और भेड़ियों ने झपट करके उसका शरीर काट खा लिया होगा।

श्लोक 67: अहो! जरा देखिये तो मैं कैसा स्त्री का गुलाम हूँ! जरा मेरी क्रूरता के विषय में तो सोचिये! वह बालक प्रेमवश मेरी गोद में चढ़ना चाहता था, किन्तु मैंने न तो उसको आने दिया, न उसे एक क्षण भी दुलारा। जरा सोचिये कि मैं कितना कठोर-हृदय हूँ!

श्लोक 68: महर्षि नारद ने उत्तर दिया: हे राजन्, तुम अपने पुत्र के लिए शोक मत करो। वह भगवान् द्वारा पूर्ण रूप से रक्षित है। यद्यपि तुम्हें उसके प्रभाव के विषय में सही-सही जानकारी नहीं है, किन्तु उसकी ख्याति पहले ही संसार भर में फैल चुकी है।

श्लोक 69: हे राजन्, तुम्हारा पुत्र अत्यन्त समर्थ है। वह ऐसे कार्य करेगा जो बड़े-बड़े राजा तथा साधु भी नहीं कर पाते। वह शीघ्र ही अपना कार्य पूरा करके घर वापस आएगा।

तुम यह भी जान लो कि वह तुम्हारी ख्याति को सारे संसार में फैलाएगा।

श्लोक 70: मैत्रेय मुनि ने आगे कहा : नारद मुनि से उपदेश प्राप्त करने के बाद राजा उत्तानपाद ने अपने अत्यन्त विशाल एवं ऐश्वर्यमय राज्य के सारे कार्य छोड़ कर दिये और केवल अपने पुत्र ध्रुव के विषय में ही सोचने लगा।

श्लोक 71: इधर, ध्रुव महाराज ने मधुवन पहुँचकर यमुना नदी में स्नान किया और उस रात्रि को अत्यन्त मनोयोग से उपवास किया।

तत्पश्चात् वे नारद मुनि द्वारा बताई गई विधि से भगवान् की आराधना में मग्न हो गये।

श्लोक 72: ध्रुव महाराज ने पहले महीने में अपने शरीर की रक्षा (निर्वाह) हेतु हर तीसरे दिन केवल कैथे तथा बेर का भोजन किया और इस प्रकार से वे भगवान् की पूजा को आगे बढ़ाते रहे।

श्लोक 73: दूसरे महीने में महाराज ध्रुव छह-छह दिन बाद खाने लगे। शुष्क घास तथा पत्ते ही उनके

खाद्य पदार्थ थे। इस प्रकार उन्होंने अपनी पूजा चालू रखी।

श्लोक 74: तीसरे महीने में वे प्रत्येक नवें दिन केवल जल ही पीते। इस प्रकार वे पूर्ण रूप से समाधि में रहते हुए पुण्यश्लोक भगवान् की पूजा करते रहे।

श्लोक 75: चौथे महीने में ध्रुव महाराज प्राणायाम में पटु हो गये और इस प्रकार प्रत्येक बारहवें दिन वायु को श्वास से भीतर ले जाते। इस प्रकार अपने स्थान पर पूर्ण रूप से स्थिर होकर उन्होंने भगवान् की पूजा की।

श्लोक 76: पाँचवें महीने में राजपुत्र महाराज ध्रुव ने श्वास रोकने पर ऐसा नियत्रंण प्राप्त कर लिया कि वे एक ही पाँव पर खड़े रहने में समर्थ हो गए, मानो कोई अचल ठूँठ हो। इस प्रकार उन्होंने परब्रह्म में अपने मन को केन्द्रित कर लिया।

श्लोक 77: उन्होंने अपनी इन्द्रियों तथा उनके विषयों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लिया और इस तरह अपने मन को चारों ओर से खींच कर भगवान् के रूप पर स्थिर कर दिया।

श्लोक 78: इस प्रकार जब ध्रुव महाराज ने समग्र भौतिक सृष्टि के आश्रय तथा समस्त जीवात्माओं के स्वामी भगवान् को अपने वश में कर लिया तो तीनों लोक हिलने लगे।

श्लोक 79: जब राजपुत्र ध्रुव महाराज अपने एक पाँव पर अविचलित भाव से खड़े रहे तो उनके पाँव के भार से आधी पृथ्वी उसी प्रकार नीचे चली गई जिस प्रकार कि हाथी के चढ़ने से (पानी में) उस के प्रत्येक कदम से नाव कभी दाएँ हिलती है, तो कभी बाएँ।

श्लोक 80: जब ध्रुव महाराज गुरुता में भगवान् विष्णु अर्थात् समग्र चेतना से एकाकार हो गये तो उनके पूर्ण रूप से केन्द्रीभूत होने तथा शरीर के सभी छिद्रों के बन्द हो जाने से सारे विश्व की साँस घुटने लगी और सभी लोकों के समस्त बड़े-बड़े देवताओं का दम घुटने लगा। अत: वे भगवान् की शरण में आये।

श्लोक 81: देवताओं ने कहा : हे भगवान्, आप समस्त जड़ तथा चेतन जीवात्माओं के आश्रय हैं। हमें लग रहा है कि सभी जीवों का दम घुट रहा

है और उनकी श्वास-क्रिया अवरुद्ध हो गई है। हमें ऐसा अनुभव कभी नहीं हुआ। आप सभी शरणागतों के चरम आश्रय है, अत: हम आपके पास आये हैं। कृपया हमें इस संकट से उबारिये।

श्लोक 82: श्रीभगवान् ने उत्तर दिया : हे देवो, तुम इससे विचलित न होओ। यह राजा उत्तानपाद के पुत्र की कठोर तपस्या तथा दृढ़निश्चय के कारण हुआ है, जो इस समय मेरे चिन्तन में पूर्णतया लीन है। उसी ने सारे ब्रह्माण्ड की श्वास क्रिया को रोक दिया है। तुम लोग अपने-अपने घर

सुरक्षापूर्वक जा सकते हो। मैं उस बालक को कठिन तपस्या करने से रोक दूँगा तो तुम इस परिस्थिति से उबर जाओगे।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव